Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 12, Issue No. 2, January-2017, ISSN 2230-7540

रामचरितमानस में सामाजिक पर्यावरण चेतना

Suman Lata[1]* Prof. Manvendra Pathak[2]

[1] Research Scholar, Kumaun University, Nainital, Uttarakhand

[2] Research Director, Department Literature, Acharya Hindi and Director Research and Broadcasting Department, Kumaun University, Nainital, Uttarakhand

----------X----------

पर्यावरण की संकल्पना अत्यंत व्यापक है हमारे चारों ओर व्याप्त संसाधन ही जैविक और अजैविक रूप से पर्यावरण की रचना करते हैं यानि पर्यावरण हमारे चारों ओर का आवरण है। मनुष्य भी पर्यावरण संरचना के जैविक घटक का महत्त्वपूर्ण और अभिन्न अंग है चेतना का विकास मानव मस्तिष्क से हुआ है। मस्तिष्क तक पहुँचने वाले आवेग सवेंग, चितंन ही चेतना को जन्म देते हैं।

'मानस' की गहराई को नापना तो असम्भव है। जिस समय में 'रामचरितमानस' की रचना तुलसीदास जी द्वारा की गई थी उस काल में तत्कालीन शासकों की अव्यवस्थित शासन व्यवस्था एवं कट्टरता से राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक जीवन त्रस्त हो रहा था। चतुर्दिक उत्पीड़न व यातनाओं द्वारा समाज विकृत दशा को प्राप्त था। समाज में हिन्दू सनातन धर्म में विकृतियाँ जोर पकड़ती जा रही थी। तुलसीदास जी ने ऐसे समय में भारतीय समाज में आदर्श मानदण्डों की पुनः स्थापना का बीड़ा उठाया यही रामचरितमानस की सामाजिक पर्यावरण चेतना है कि गोस्वामी जी ने 'मानस' रचकर इसे सामाजिक मूल्यों के आदर्शों का जीवन्त प्रतीक बना दिया। कामिल बुल्के के अनुसार – "इसी एक रचना के द्वारा हिन्दी प्रदेश में रामभक्ति की धारा फैल गई और आज तक प्रवाहित होती रही अतः रामभक्ति के विकास में रामचरितमानस का महत्त्व अद्वितीय है"[1]

तुलसी की प्रतिभा का महामहिम फल रामचरितमानस जन-जन के मन में बसता है। हिन्दू धर्म ग्रंथों में अति महत्त्वपूर्ण सात कांडों में विभाजित मानस को कौन नहीं जानता। उसमें व्यवहारिक तथा पारलौकिक सत्य का सुन्दर तथा मंगलविधायी निरूपण है यदि इसे हिन्दी भाषा का सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रंथ कहा जाए तो अतिश्योक्ति ना होगी।

यह विचार करने योग्य है कि 'मानस' में ऐसे कौन से तत्त्व हैं। जिसके कारण तुलसी के समकालीन समय से वर्तमान समय तक 'मानस' हर घर में मौजूद है। इसका कारण धार्मिक और राजनैतिक तो कदापि नहीं है। तुलसी के 'मानस' को जिसने अमरत्त्व प्रदान किया है वह है तुलसी की 'लोकदृष्टि' लोकमंगल की कामना ही तुलसी की साहित्य साधना है। वें शास्त्रमत के साथ लोकमत को भी महत्त्वपूर्ण मानते है । वे मानस में स्वंय लिखते है'-

"सरजू नाम सुमंगल मूला।

लोक बेद मत मंजुल कूला"[2]

अर्थात कवितारूपिणी नदी का नाम सरयू है जो सम्पूर्ण मंगलों की जड़ है। लोकमत और वेदमत इसके दो सुन्दर किनारे हैं यह लोक ही समाज है राम ईश्वर होने के साथ ही इस समाज का अभिन्न हिस्सा हैं।

विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार – "तुलसी की विशेषता यह है कि उन्होंने राम को सामाजिक, जागतिक और समकालीन नैतिक मूल्यों के आदर्शों का जीवन्त प्रतीक बना दिया।"[3]

समाज और व्यक्ति का परस्पर घनिष्ठ सम्बंध है। समाज ही व्यक्ति को सुसस्कृत एवं सुसभ्य बनाता है। डॉ. रामनाथ शर्मा के अनुसार- "सामाजिक संगठन में प्रत्येक व्यक्ति अपने अपने वर्ण और आश्रम के अनुसार अपने-अपने धर्म का पालन करता था। भारतीय दर्शन में पुरूषार्थ की धारणा व्यक्ति को सर्वांग जीवन की ओर ले जाती है"[4]

इस संर्वांग जीवन के आदर्श से समाज के विभिन्न अंग भली प्रकार विकसित होकर समाज में अपने-अपने कार्यभाग अदा

www.ignited.in

करते हैं यहां हम मानस के संदर्भ में समाज के इन्हीं महत्त्वपूर्ण अंगों की संक्षिप्त विवेचना करेंगे।

(क) वर्ण व्यवस्था:- इस व्यवस्था में भारतीय समाज को चार वर्णों में विभाजित किया गया था। ऋग्वेद के 'पुरूष सूक्त' में वर्णों की उत्पत्ति विराट पुरूष से मानी गई है। जिसके मुख से ब्राह्मण, बाहु से क्षत्रिय, उरू (जाँघ) से वैश्य तथा पद (पैर) से शूद्र उत्पन्न हुए-

"ब्राह्मणोडस्य मुखमासीद बाहू राजन्य: कृतः।

उरूतदस्य यद्वैश्यः पदभयां शूद्रोडजायत।।"[5]

'मानस' में उत्तरकाण्ड में 'रामराज्य' के प्रसंग में गोस्वामी जी कहते हैं-

'वरनाश्रम निज निज निरत बेद पथ लोग।

चलहिं सदा पावहिं सुखहिं नहिं भय सोक न रोग।"[6]

तुलसीदास की यह धारणा हैं कि तत्कालीन समाज में जो अनैतिकता, अन्याय, आचार हीनता, विभेद सभी का कारण वर्णव्यवस्था का विकृत होना तथा टूट जाना हैं। तुलसी कहते हैं कि कलियुग में न वर्णधर्म रहता है, न चारों आश्रम रहते है सब पुरूष स्त्री वेद के विरोध में लगे रहते है।

तुलसी के समकालीन निर्गुण संतो की वाणी में वर्ण व्यवस्था के प्रति विरोध दिख जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता में श्री कृष्ण वर्णों की उत्पत्ति के विषय में कहते हैं- "मैने गुण और कर्म के आधार पर चारों वर्णों की सृष्टि की है।"[7]

परन्तु परवर्ती युगों तक आते-आते गुण व कर्म का आधार इसमें नही रहा। यह अत्यंत कठोर हो गई। जिसके परिणामस्वरूप समाज के एक विशेष वर्ग को मानवीय अधिकारों से वंचित किया गया। ऐसी स्थिति में तुलसी द्वारा वर्ण व्यवस्था का समर्थन करने पर उनकी गहरी आलोचना भी हुई। 'मानस' में रामराज्य की स्थापना के बाद अयोध्या नगरी के घाट पर चारों वर्णों के पुरूष एक साथ स्नान करते है।– 'राजघाट सब विधि सुंदर बर। मज्जहिं तहां बरन चारिउ नर।'[8]

तुलसी कितने प्रगतिशील है इसे सम्पूर्ण मानस में देखा जा सकता है। पुरूष, स्त्री, नपुसंक, चर अचर सभी जीवों को साथ लेकर चलने की प्रवृत्ति ने तुलसी को असंख्य हृदयों तक पहूँचाकर कवि से महाकवि बना दिया।

"पुरूष नपुसंक, नारि वा जीव चराचर कोइ।

सर्वभाव भज कपट तजि मोहि परम प्रिय सोइ।"[9]

तुलसी वर्णव्यवस्था को पथभ्रष्ट समाज में विकल्प के रूप में देखते है किन्तु यह व्यवस्था असमानता की पक्षधर कदापि नही है। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार- "वास्तव में अपने मौलिक रूप में वर्ण व्यवस्था सामाजिक जीवन और आश्रम व्यवस्था व्यक्ति जीवन के संगठन का आधार है।"[10]

(ख) पारिवारिक मूल्य बोध:- "परिवार ही हमारे सामाजिक जीवन की आधारशिला है।' जिसमें हमारे जन्म से लेकर मृत्यु तक सारी गतिविधियाँ संचालित होती है। हिन्दू परिवार का जीवन-दर्शन पुरूषार्थ पर आधारित है जो विश्व के अन्य समाजों के परिवारों का जीवन दर्शन नहीं है । अतः परिवार मनुष्य के सभ्य और सुसस्कृत होने का स्वाभाविक तारतम्य है जिसके माध्यम से मानव जीवन का उन्नयन होता हैं।"[11]

तुलसीदास ने रामचरितमानस में परिवार के आदर्श और मर्यादा को स्थापित करने का सुन्दर प्रयास किया है यह प्रयास इतना प्रभावी है कि आचार्य शुक्ल लिखते हैं कि-

"यदि भारतीय शिष्टता और सभ्यता का चित्र देखना हो तो इस राम समाज में देखिए। कैसी परिष्कृत भाषा में कैसी प्रवचन पटुता के साथ प्रस्ताव उपस्थित होते है किस गंभीरता और शिष्टता के साथ बात का उत्तर दिया जाता है छोटे-बड़े की मर्यादा का किस सरलता के साथ पालन होता है।"[12]

'मानस' में राम कैकेयी संवाद में कैकेयी की कठोर आज्ञा पर श्री राम मीठी वाणी एवं शिष्टता से कहते है।–

"सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी।

जो पितु मातु वचन अनुरागी।'

"तनय मातु पितु तोष निहारा।

दुर्लभ जननि सकल संसारा।" [13]

तुलसी ने परिवार में केवल आदर्श चरित्रों को ही नही अपितु यथार्थ चरित्रों को भी प्रस्तुत किया है। कैकेयी मंथरा ऐसे ही यथार्थ पात्र है जो हर कुटुम्ब में मिल जाते हैं। राम वनवास के बाद भरत सिंहासन ग्रहण नहीं करते, भरत राम मिलाप की हृदयस्पर्शीता 'मानस' के पाठकों को भाव विभोर करती है। सीता का राम के साथ वन जाना, वहीं सीता हरण के बाद राम द्वारा व्याकुल होकर सीता को ढूंढना ये सब वृतांत आदर्श कुटुम्ब की निर्मिति दर्शाते है। 'मानस' में रचित आदर्श परिवार आज

www.ignited.in

भी समाज व परिवार के विकास के लिए उतना ही आवश्यक है जितना कि सोलवीं शती में था।

(ग) **गुरू शिष्य सम्बंध:-** मानस में गोस्वामी जी ने 'गुरू महिमा' की महत्ता की असंख्य स्थानों पर चर्चा की है। बालकाण्ड के प्रारम्भ में ही ईश वन्दना के बाद वें गुरू महाराज की वन्दना करते हुए कहते है कि- "श्री गुर पद नख मनि गन जोति/सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती"[14]

हर एक मंगल कार्य पर गुरू को दान देने और आशीर्वाद लेने का वर्णन मानस में किया है। राजा दशरथ की गुरू के प्रति भक्ति को वर्णित करते हुए कवि कहते है कि- "जे गुर चरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल विभव बस करहीं।"[15]

भारतीय समाज में गुरू शिष्य सम्बंध बहुत ही घनिष्ट था। समाज में उसकी स्थिति सर्वोच्च थी अतः गोस्वामी जी ने भारतीय समाज में गुरू को प्राप्त आदरभाव, गरिमा और प्रतिश्ठा को ही मानस में प्रतिबिम्बित किया हैं।

(घ) **नारी का स्थान:-** हिन्दू समाज में नारी के लिए सम्मान व मर्यादायुक्त दृष्टि रखी जाती थी। वैदिक काल में स्त्रियों को पुरूशों के समान ही सभी अधिकार प्राप्त थे। किन्तु युग के परिवर्तन के साथ स्त्रियों की दशा तथा पुरूषों का उनके प्रति दृष्टिकोण परिवर्तन होने लगा। 'मानस' में अनेक स्थान पर 'नारी धर्म' का उल्लेख किया गया है। सीता की विदाई के समय उनकी माताएं उन्हें पति सेवा की सिखावन देती है। सीता की सखियाँ भी सीता को अत्यंत स्नेह से और कोमल वाणी से सीता से स्त्रियों के धर्म की बात कहती हैं वन गमन के समय अनसूयाजी सीता से कहती है कि शरीर वचन और मन से पति के चरणों से प्रेम करना, स्त्री के लिए बस, यह एक ही धर्म है, एक ही व्रत है और एक ही नियम है। 'एकइ धर्म एक व्रत नेमा, काँय वचन मन पति पद प्रेमा।"[16]

रावण की मृत्यु के पष्चात सीता को अपने आप को पतिव्रता सिद्ध करने के लिए अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है। यद्यपि गोस्वामी जी इसे लीला कहकर और शीघ्रता से सीता की अग्नि परिक्षा कराकर राम-सीता का प्रस्थान करा देते है जिस कवि ने 'मानस' में लगभग हर वर्ग के प्रति प्रगति शीलता दिखलाई यहाँ आकर उनकी दृश्टि संकीर्ण क्यों हो जाती है। इसका कारण तत्कालीन समाज में दिखता है। पुरावैदिक काल में स्त्रियों की दशा व स्थिति कुटुम्ब तक की सीमित हो गई थी। परिणामस्वरूप अब वह पति और पतिधर्म के बंधनों में बाँध दी गई।

किन्तु गोस्वामी जी स्त्रियों की इस परतन्त्र भाव वाली मनः स्थिति व पीड़ा को समझ रहे थे। बालकाण्ड का बहुचर्चित प्रसंग जब रानी मैना अपनी पुत्री पार्वती से पति सेवा अर्थात शिव चरणों की पूजा की सिखावन देती है अचानक ही इस प्रकार की बातें कहते-कहतें उनकी आँखों में आँसू भर आते है। उन्होंने अपनी कन्या को छाती से चिपटा लिया और फिर बोली-

"कत विधि सृजी नारि जगत माहि।

पराधीन सपनेहूँ सुख नाहि "[17]

(विधाता जगत में स्त्री जाति को क्यों पैदा किया, पराधीन को सपनें में भी सुख नही मिलता।)

अतः तुलसी के स्त्री सम्बन्धी दृष्टिकोण को संकीर्ण कहना, हमारा एकांकी दृष्टिकोण होगा। वस्तुतः हर लेखक अथवा कवि अपने युग के सापेक्ष रचना लिखता है। युग और सन्दर्भ बदल जाने पर उसके साहित्य के मूल्यांकन के आधार भी दोबारा बदल जाते है। यह सत्य है कि तुलसी के काव्य में नारी, नारी धर्म अथवा पति सेवा में ही शोभा पाती है। किन्तु नारी की परतन्त्रता की पीड़ा तक पहुँचना भी, उस युग में प्रगतिशीलता थी। जो प्रमाणित करता है कि समाज में नारी की स्थिति व दशा को लेकर भी गोस्वामी में चेतना थी। अनन्तः कह सकते है कि पर्यावरण अर्थात जो हमारे चारों ओर विद्यमान है मनुष्य समाज में भी सामाजिक मूल्य व आदर्श चारों ओर मनुष्य को घेरे रहते है। गोस्वामी जी के सामाजिक मूल्यों के आदर्श का जीवन्त प्रतीक 'मानस' है जिसमें सामाजिक पर्यावरण चेतना अद्भूत रूप में मुखर हुई है।

सन्दर्भ-

1. कामिल बुल्के, राम कथा, प्रसंग 197
2. रामचरितमानस, बालकाण्ड, दो. 39, चै. 6
3. विश्वनाथ त्रिपाठी, लोकवादी तुलसीदास, पृष्ठ सं. 16
4. डॉ. रामनाथ शर्मा, भारतीय समाज, संस्थाएं और संस्कृति, पृष्ठ सं. 29

5. ऋग्वेद 10-90-12

6. रामचरितमानस, उत्तरकांड, दो. 20

7. श्रीमद्भागवद् गीता, अध्याय 4, श्लोक 13

8. रामचरितमानस, उत्तरकांड, दो. 29,चै. 2

9. रामचरितमानस, उत्तरकांड, दो. 87 (क)

10. डॉ. नगेन्द्र, तुलसी संदर्भ, प्र. 21 (वाणी प्रकाशन)

11. डॉ. जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृष्ठ सं 369 (2)

12. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, त्रिवेणी, प्रष्ट सं. 67, 68

13. रामचरितमानस, उत्तरकांड, दो. 5, छं. 1

14. रामचरितमानस, बालकाण्ड, दो. 1, चै. 3

15. रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, दो. 3, चै. 3

16. रामचरितमानस, अरण्यकाण्ड, दो. 4, चै. 5

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

आधार ग्रन्थ

1. श्रीमद्भगवद्गीता, टीकाकार कृष्णकूपा श्रीमूर्ति, भक्ति वेदांत बुक ट्रस्ट हरे कृष्ण धाम जुहू, मुम्बई प्रकाशन

2. श्री राम चरिमानस, गोस्वामी तुलसीदास

सहायक ग्रन्थ

1. डॉ. रामनाथ शर्मा एवं डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा, भारतीय समाज, संस्थाएँ और संस्कृति, एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली

2. फादर कामिल बुल्के, अंग्रेजी हिन्दी कोश नई दिल्ली 1982

3. फादर कामिल बुल्के, रामकथा, प्रयाग विष्वविद्यालय प्रकाशित छटा संशोधन संस्करण, 1999

4. विश्वनाथ त्रिपाठी, लोकवादी तुलसीदास, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली पहला संस्करण,1974

5. राजेन्द्र कुमार जुमनानी, पर्यावरण संरक्षण विधि एवं न्यायिक संकिता क्लासिकल कम्पनी, नई दिल्ली प्रथम सस्करण सन 2002

6. विद्यानिवास मिश्र, रामायण का काव्यमर्म, प्रभात पब्लिकेशन, प्रभात प्रकाशन आसफ अली रोड, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2001 पत्रिका

7. आयुर्वेद का प्राण, शान्तिकुंज हरिद्वार

Corresponding Author

Suman Lata*

Research Scholar, Kumaun University, Nainital, Uttarakhand